कृष्णमूर्ति : सर, आप वैज्ञानिक हैं, आपने परमाणु इत्यादि का निरीक्षण किया है। इस सारे निरीक्षण के उपरांत क्या आप यह महसूस नहीं करते कि इस सबके परे बहुत कुछ और भी है?

डेविड बोम : हमेशा यह महसूस होता है कि इसके पार कुछ और है, पर इससे यह पता नहीं चलता कि यह क्या है। यह तो स्पष्ट है ही कि जो कुछ भी मनुष्य जानता है, सीमित है।

कृष्णमूर्ति : हां।

डे. बो. : और इसके परे कुछ और होना ही चाहिए।

कृष्णमूर्ति : कैसे वह आपसे संपर्क करे, ताकि आप अपनी वैज्ञानिक जानकारी, सक्षम मस्तिष्क व अन्य क्षमताओं आदि-आदि सहित....., कैसे आप इसे भली-भांति समझ सकेंगे?

डे. बो. : क्या आप कह रहे हैं कि इसे भली-भांति समझा नहीं जा सकता?

कृष्णमूर्ति : नहीं, नहीं। क्या आप इसे समझ सकते हैं? मैं यह नहीं कह रहा कि आप समझ नहीं सकते--क्या आप इसे भली-भांति समझ सकते हैं?

डे. बो. : देखिये यह स्पष्ट नहीं है। पहले आप कह रहे थे कि यह समझ के बाहर.....

कृष्णमूर्ति : भली-भाँति समझने से मेरा आशय है कि क्या आपका मन, जो उच्च प्रशिक्षित है, जो प्रत्यक्ष-बोध में समर्थ है, सिद्धांतों इत्यादि के परे जाकर--मैं आपको क्या बताने की कोशिश कर रहा हूँ? मैं कहना यह चाह रहा हूं कि क्या आप इसमें गति कर सकते हैं? गति नहीं--आप समझ रहे हैं? क्योकि गति में तो समय और बाकी चीज़ें आ जाती हैं। क्या आप--मैं कहना क्या चाहता हूं? क्या आप इसमें प्रवेश कर सकते हैं? नहीं, ये तो सारे शब्द हैं। सर, रिक्तता के पार क्या है? क्या वह मौन है?

डे. बो. : क्या वह रिक्तता से मिलता-जुलता नहीं है?

कृष्णमूर्ति : हां, यही मैं कहना चाह रहा हूं। इसमें एक-एक कदम करके आगे बढ़ते हैं। क्या वह मौन है? या, क्या मौन रिक्तता का अंश है?

डे. बो. : हाँ, मैं यही कहूंगा।

कृष्णमूर्ति : मैं भी यही कहना चाहूंगा। यदि यह मौन नहीं है--एक मिनट सर, मैं बस यह पूछ रहा हूं, क्या हम कह सकते हैं कि यह आत्यंतिक है, परम है? आप समझ रहे हैं?

डे. बो. : इसके लिए, 'परम' से हमें क्या अभिप्रेत है, यह देखना होगा। यह कुछ ऐसा होना चाहिए जो पूर्णतया स्वाधीन हो; 'परम' का अर्थ वस्तुतः यही है। यह किसी पर निर्भर नहीं करता।

कृष्णमूर्ति : जी हां, खुशी की बात है; हम इसके कुछ करीब पहुंच रहे हैं।

डे. बो. : पूरी तरह से अपने आप गतिशील, जैसे कि यह स्वतः सक्रिय हो।

कृष्णमूर्ति : हां। क्या आप कहेंगे कि प्रत्येक वस्तु का एक कारण होता है, और इसका कोई कारण नहीं है?

डे. बो. : देखिए, यह धारणा तो पहले से ही है, काफी पुरानी है। इस धारणा को अरस्तू ने विकसित किया था कि वह परम अपना कारण स्वयं होता है।

कृष्णमूर्ति : हां।

डे. बो. : एक अर्थ में इसका कोई कारण नहीं है। यह वही बात है।

कृष्णमूर्ति : देखिए, जैसे ही आपने अरस्तू की बात की, तो यह वह नहीं है। अब हम इस बात तक पहुंचें कैसे? रिक्तता ऊर्जा है और रिक्तता का अस्तित्व मौन में होता है, या इस बात को विपरीत क्रम में कहें, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता--ठीक है? जी हां, इस सबके पार कुछ है तो। सम्भवतः इसे शब्दों में कभी व्यक्त नहीं किया जा सकता। पर इसे शब्दों में रखना तो होगा। समझ रहे हैं?

डे. बो. : आप यह कह रहे हैं कि परम को शब्दों में व्यक्त करना आवश्यक है, साथ ही हम यह भी महसूस करते हैं कि ऐसा किया नहीं जा सकता। इसे शब्दों में रखने का कोई भी प्रयास इसे सापेक्ष बना देता है।

कृष्णमूर्ति : हां। मुझे नहीं मालूम कि इस सबको शब्दों में कैसे कहें।

डे. बो. : : मैं सोचता हूं कि परम के संदर्भ में इस खतरे का हमारा एक लंबा इतिहास रहा है। लोगों ने इसे शब्दों में रखा है और यह बहुत दमनकारी बन गया है।

कृष्णमूर्ति : वह सब जाने दें। आप देखें, अन्य लोग, अरस्तू, बुद्ध आदि ने जो कहा है, उसकी जानकारी न होने का एक लाभ है। आप मेरा अभिप्राय समझ रहे हैं? लाभ इस अर्थ में कि मन तब दूसरों की धारणाओं में नहीं रंगा होता, उनके वक्तव्यों में नहीं उलझा रहता। वह सब तो हमारे संस्कारों वगैरह का ही हिस्सा है। अब बात उस सबके पार जाने की है। हम कोशिश क्या कर रहे हैं, सर?

डे. बो. : मेरे ख्याल में हमारी कोशिश उसे संप्रेषित करने की है, जो पार है, परम है।

कृष्णमूर्ति : *परम* शब्द तो मैंने तुरंत निकाल दिया था।

डे. बो. : तब जो भी यह है, रिक्तता और मौन से परे है।

कृष्णमूर्ति : उस सबसे परे। उस सबके पार है। वह सब तो विराटता का अंश ही है।

डे. बो. : हां, पर रिक्तता और मौन भी तो विराटता ही है, क्या ऐसा नहीं है? ऊर्जा स्वयं में ही एक विराटता है।

कृष्णमूर्ति : हां वह मैं समझता हूं। पर कुछ ऐसा है, जो इस सबसे बहुत अधिक विराट है। सर, रिक्तता व मौन व ऊर्जा विराट है, वस्तुतः अपरिमेय है। पर कुछ ऐसा है जो इस सबसे--मैं इस शब्द का प्रयोग कर रहा हूं--*महत्तर* है।

डे. बो. : हां, मैं इसे टटोल रहा हूं, मेरा मतलब है इसे देख रहा हूं। यह तो नजर आता है कि आप जो भी कहते हैं, रिक्तता के बारे में या किसी अन्य तत्त्व के बारे में, उस सबसे परे भी कुछ और है।

कृष्णमूर्ति : नहीं, एक वैज्ञानिक के रूप में आप इसे स्वीकार क्यों करते हैं--'स्वीकार' शब्द के प्रयोग के लिए मुझे क्षमा करें--आप इसके साथ आते ही क्यों हैं?

डे. बो. : हां, क्योंकि हम कदम-दर-कदम, हर एक कदम की ज़रूरत देखते हुए यहां तक आए हैं।

कृष्णमूर्ति : देखिए यह सब एकदम युक्तियुक्त, तर्कसंगत और संतुलित है।

डे. बो. : और यह भी दिखाई देता है कि बात सही है; ऐसा ही है।

कृष्णमूर्ति : हां। तो यदि मैं कहूं कि कुछ है जो इस सबसे, मौन से, ऊर्जा से, महत्तर है, अधिक विराट है, तो क्या आप इसे स्वीकार करेंगे? स्वीकार इस अर्थ में कि अब तक हम तर्कसंगत रहे हैं।

डे. बो. : हम यह कहेंगे कि जो कुछ भी आप कहते हैं, निश्चित ही उसके पार भी कुछ तो है। जो भी आप कहें मौन, ऊर्जा या जो कुछ, तो जो भी परे हो, तार्किक रूप से उससे भी परे के लिए स्थान तो बचा ही रहता है।

कृष्णमूर्ति : नहीं, नहीं।

डे. बो. : अच्छा ऐसा क्यों है? आप देखिए, जो कुछ भी आप कहते हैं, हमेशा उससे परे के लिए गुंजाइश तो बची रहती है।

कृष्णमूर्ति : बात तो यही है कि उससे परे और कुछ है नहीं।

डे. बो. : हां, लेकिन यह बात स्पष्ट नहीं हो रही है क्योंकि .....

कृष्णमूर्ति : उससे परे कुछ नहीं है। मैं इस पर कायम हूं। मताग्रह या हठ के कारण नहीं, पर मुझे यह प्रतीति होती है कि वही प्रत्येक वस्तु का आरंभ और अंत है। सर, सामान्य संप्रेषण में, आप बोलचाल में कहें, तो अंत तथा आरंभ एक ही है। ठीक?

डे. बो. : किस अर्थ में? क्या इस अर्थ में कि आप प्रत्येक वस्तु के आरंभ को उसके अंत के रूप में ले रहे हैं?

कृष्णमूर्ति : हां। ठीक है? आप ऐसा कहेंगे?

डे. बो. : हां, यदि हम कहें कि एक आधारभूमि है, जहां से यह आता है तो लौटना भी उस आधारभूमि में ही होना चाहिए।

कृष्णमूर्ति : सही है। यही वह आधारभूमि है जिससे सब कुछ अस्तित्व में है, आकाश...

डे. बो. :..ऊर्जा ...

कृष्णमूर्ति : ..ऊर्जा, रिक्तता, मौन, यह सभी कुछ उसी पर है--कोई भूमि नहीं, आप समझ रहे हैं?

डे. बो. : नहीं, वह तो बस एक रूपक है।

कृष्णमूर्ति : इसके परे और कुछ नहीं है, इसका कोई कारण नहीं है। यदि आप कहें कि कारण है तो आधारभूमि भी होनी चाहिए।

डे. बो. : तब एक और आधारभूमि होगी।

कृष्णमूर्ति : नहीं। वही आरंभ और अंत है।

डे. बो. : यह और स्पष्ट हो रहा है।

कृष्णमूर्ति : ठीक बात है। क्या इससे आप को कुछ संप्रेषित होता है?

डे. बो. : हां। मेरे विचार में इससे कुछ संप्रेषित होता है।

कृष्णमूर्ति : कुछ ही। क्या आप इससे आगे यह कहेंगे कोई आरंभ नहीं है तथा कोई अंत नहीं है?

डे. बो. : जी हां। यह आधारभूमि से आता है, आधारभूमि में ही लौट जाता है, किंतु प्रारंभ या समाप्त नहीं होता है।

कृष्णमूर्ति : हां कोई प्रारंभ नहीं है, कोई अंत नहीं। इसके विराट निहितार्थ हैं। सर, क्या यह मृत्यु है--मृत्यु इस अर्थ में नहीं कि मैं मर जाऊंगा--बल्कि हर चीज का पूर्ण अवसान?

डे. बो. : देखिए, पहले तो आपने कहा था कि रिक्तता सभी कुछ का अंत है, तो अब यह और अंत किस अर्थ में है? रिक्तता वस्तुओं का अंत है, है कि नहीं?

कृष्णमूर्ति : हां, हां। क्या वही मृत्यु है? वह रिक्तता? हर उस चीज़ की मृत्यु जिसे मन ने उपजाया-पोसा है। यह रिक्तता मन की, किसी विशेष मन की ही उपज नहीं है।

डे. बो. : नहीं, यह तो वैश्विक मन है।

कृष्णमूर्ति : वह रिक्तता वही है।

डे. बो. : हां।

कृष्णमूर्ति : उस रिक्तता का अस्तित्व तभी होता है जब विशिष्ट की मृत्यु होती है।

डे. बो. : हां।

कृष्णमूर्ति : मैं यह ठीक से कह नहीं सकता कि मैं इसे व्यक्त कर पा रहा हूं।

डे. बो. : हां, वही रिक्तता है, पर अब आप यह भी कह रहे हैं कि इस आधारभूमि में मृत्यु और भी आगे जाती है?

कृष्णमूर्ति : जी, हां, बिलकुल।

डे. बो. : तो आप कह रहे हैं कि विशिष्ट का अंत, विशिष्ट की मृत्यु, रिक्तता है जो कि वैश्विक है। क्या अब आप यह कहने वाले हैं कि उस वैश्विक की भी मृत्यु होती है?

कृष्णमूर्ति : हां, मैं यही कहने की कोशिश कर रहा हूं।

डे. बो. : उस आधारभूमि में लौट जाता है।

कृष्णमूर्ति : क्या इससे कुछ संप्रेषित होता है?

डे. बो. : लगता है, हां।

कृष्णमूर्ति : ज़रा एक क्षण इसके साथ ठहरे रहें। इसे देखते हैं। मेरे ख्याल में, सर, यह कुछ संप्रेषित कर रहा है, है न?

डे. बो. : हां। अब, यदि विशिष्ट और वैश्विक मरते हैं, तो वह मृत्यु है, ठीक?

कृष्णमूर्ति : जी हां। आखिरकार, एक खगोल-विज्ञानी कहता ही है कि ब्रह्मांड में प्रत्येक वस्तु मर रही है, विस्फोटित होती जा रही है, मरती जा रही है।

डे. बो. : हां, लेकिन निश्चित ही आप यह अंदाज़ा लगा सकते हैं कि इससे परे कुछ रहा होगा।

कृष्णमूर्ति : हां, यह बिलकुल ऐसा ही है।

डे. बो. : मेरा ख्याल है कि हम आगे बढ़ रहे हैं। वैश्विक तथा विशिष्ट--पहले विशिष्ट की मृत्यु रिक्तता में होती है और तब आता है वैश्विक।

कृष्णमूर्ति : और वह भी मरता है।

डे. बो. : आधारभूमि में; ठीक है?

कृष्णमूर्ति : हां।

डे. बो. : अतः आप कह सकते हैं कि आधारभूमि न जन्म लेती है और न उसकी मृत्यु होती है।

कृष्णमूर्ति : सही है।

डे. बो. : अच्छा, मुझे लग रहा है कि यदि आप कहते हैं कि वैश्विक का अवसान होता है, तो इसके व्यक्त होने की क्षमता का तो लगभग अभाव हो जाएगा, क्योकि व्यक्त ही तो वैश्विक है।

कृष्णमूर्ति : देखिए, मैं इसे बस इस रीति से स्पष्ट कर रहा हूं : सब कुछ मर रहा है सिवा 'उस' के। क्या इससे कुछ बात बन रही है?

डे. बो. : हां। उसी में से सब कुछ उदित हो रहा है और उसी में इसका अवसान हो रहा है।

कृष्णमूर्ति : तो उसका न तो प्रारंभ है, न अंत है।

डे. बो. : वैश्विक के अंत की बात करने का क्या अभिप्राय होगा? वैश्विक के अवसान का तात्पर्य क्या होगा?

कृष्णमूर्ति : कुछ नहीं। यदि वैसा हो रहा है तो उसका कोई तात्पर्य क्यों होना चाहिए? उस घटना का मनुष्य से संबंध ही क्या है? आप मेरा अभिप्राय समझे? मनुष्य जो भयावह समय और वैसी तमाम बातों से गुज़र रहा है, तो 'उसका' मनुष्य के संदर्भ में अर्थ ही क्या है?

डे. बो. : अच्छा, ऐसा कहें कि मनुष्य यह महसूस करता है कि अपने जीवन में उस आत्यंतिक आधारभूमि से उसका कुछ तो संपर्क होना चाहिए, अन्यथा जीवन का अर्थ ही क्या है?

कृष्णमूर्ति : पर वैसा है नहीं। उस अन्यथा आधारभूमि का मनुष्य से कोई संबंध नहीं है। मनुष्य तो अपनी हत्या में लगा है, वह सब कुछ उस आधारभूमि के विपरीत ही कर रहा है।

डे. बो. : इसी कारण से मनुष्य के लिए जीवन का कोई अर्थ नहीं रहा।

कृष्णमूर्ति : मैं एक आम आदमी हूं : मैं कहता हूं, ठीक है, आपने अद्‌भुत रीति से सूर्यास्तों के विषय में चर्चा की है लेकिन इस सब का मेरे साथ क्या नाता है। क्या उससे या आपकी चर्चा से मुझे अपने भद्देपन से छुटकारा पाने में मदद मिलेगी? यह जो मेरी पत्नी मुझसे झगड़ती है--या जो भी कुछ होता रहता है।

डे. बो. : मैं समझता हूं कि मैं पीछे लौटूंगा और कहूंगा कि हमने इस पर तर्कसंगत रीति से चर्चा की थी, मनुष्य के दुःख से बात आरंभ करके, यह दिखाते हुए कि इसकी शुरूआत एक गलत मोड़ लेने से हुई थी और जिसके अनिवार्य परिणाम के रूप में .....

कृष्णमूर्ति : वह कहता है कि ठीक है, लेकिन मेरी मदद करिए ताकि मैं सही मोड़ ले सकूं। मुझे सही रास्ते पर ले जाइए। और इस बात के उत्तर में आप कहते हैं, कुछ भी अन्यथा होना, बनना बंद कर दीजिए।

डे. बो. : ठीक है। फिर समस्या क्या है?

कृष्णमूर्ति : वह इसको सुनेगा तक नहीं।

डे. बो. : तब मुझे लगता है कि जो इसे देख पा रहा है, उसके लिए यह मालूम करना आवश्यक होगा कि सुनने में बाधा क्या है।

कृष्णमूर्ति : ज़ाहिर है आप देख सकते हैं कि बाधा क्या है।

डे. बो. : क्या बाधा है?

कृष्णमूर्ति : 'मैं'।

डे. बो. : हां, पर मेरा मतलब है और गहरे में?

कृष्णमूर्ति : और गहरे में, आपके सारे विचार, गहन आसक्तियां और वह सारा कुछ--यह सब आपकी राह रोकता है। यदि आप इस सबको छोड़ नहीं सकते तो आपका 'उससे' कोई संबंध नहीं होता है। लेकिन व्यक्ति यह सब छोड़ना चाहता नहीं ।

डे. बो. : हां, मैं वह समझ रहा हूं। पर उसका चाहना तो उसके सोचने के ढंग का परिणाम ही है।

कृष्णमूर्ति : वह तो बस बिना किसी परेशानी के जिये चले जाने का कोई आरामदेह, आसान तरीका चाहता है, और वह उसे मिल सकता नहीं।

डे. बो. : नहीं। सिर्फ यह सब छोड़ देने पर ही।

कृष्णमूर्ति : कोई संपर्क तो होना चाहिए। उस आधारभूमि और इसके, इस आम आदमी के बीच कोई संबंध तो होना चाहिए, नहीं तो जीने का अर्थ ही क्या है?

डे. बो. : हां, यही मैं पहले कहने की कोशिश कर रहा था कि इस संबंध के बिना.....

कृष्णमूर्ति : ....कोई अर्थ नहीं है।

डे. बो. : और तब लोग अर्थ गढ़ लेते हैं।

कृष्णमूर्ति : बिलकुल।

डे. बो. : अच्छा, पीछे लौट कर भी देखें, तो प्राचीन धर्मों ने इससे मिलती-जुलती बातें कही हैं कि ईश्वर ही वह आधार है, और इसीलिए, आपको पता ही है, वे कहते रहे हैं कि ईश्वर को खोजिए।

कृष्णमूर्ति : नहीं जी, यह ईश्वर नहीं है।

डे. बो. : नहीं, यह ईश्वर नहीं है, पर बात वही कही जा रही है--आप कह सकते हैं कि 'ईश्वर' इस बात को शायद कुछ अधिक ही व्यक्तिपरक रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास है।

कृष्णमूर्ति : हां। उन्हें आशा दीजिए, उन्हें आस्था दीजिए, समझ रहे हैं? जीवन को जीने के लिए थोड़ा और आरामदेह बना दीजिए।

डे. बो. : अच्छा, क्या इस बिंदु पर, आप पहले यह पूछ रहे हैं : आम आदमी को यह कैसे संप्रेषित किया जाए? क्या यही आपका प्रश्न है?

कृष्णमूर्ति : हां, कमोबेश यही है। और यह भी महत्त्वपूर्ण है कि उसे इस बात को सुनना चाहिए। आप एक वैज्ञानिक हैं। आप सुनने को तत्पर हैं क्योंकि हम मित्र हैं। पर आपके मित्रों में से कौन इसे सुनेगा? वे कहेंगे, आप क्या अजूबा बाते किए जा रहे हो? सर, मैं यह महसूस करता हूं कि यदि कोई इसमें जा पाए, तो हमें एक अद्‌भुत रूप से व्यवस्थित संसार देखने को मिलेगा।

डे. बो. : हां। और उस संसार में हम कर क्या रहे होंगे?

कृष्णमूर्ति : जी रहे होंगे।

डे. बो. : हां, पर मेरा मतलब है, हमने सर्जनात्मकता के बारे में कुछ कहा था।

कृष्णमूर्ति : हां। और तब यदि आप में द्वंद्व नहीं है, 'मैं' नहीं है, तो कुछ और सक्रिय है।

डे. बो. : हां, यह कहना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि परिपूर्णता उपलब्ध कर लेने की ईसाई अवधारणा काफी उबाऊ लग सकती है, क्योंकि फिर करने को कुछ नहीं रहता।

कृष्णमूर्ति : हमें आगे भी किसी और समय इस विषय पर यह बात जारी रखनी चाहिए, क्योंकि यह कुछ ऐसा है जिसे समक्ष लाया ही जाना चाहिए।

डे. बो. : असंभव सा लगता है।

कृष्णमूर्ति : हम काफी दूर आ चुके हैं।

'द एंडिंग आफ टाइम'] 2 अप्रैल 1980